KHAN GLOBAL STUDIES
KGS Campus, Sai Mandir, Musallahpur Hatt, Patna - 6
Mob : 8877918018, 875735880

BPSC MAINS (POLITY)

By : Karan Sir

भारतीय राज्यव्यवस्था

बिहार लोक सेवा आयोग (मुख्य परीक्षा) विशेष

पाठ्यक्रम

1. प्रस्तावना दर्शन और महत्त्व
2. मौलिक अधिकार
   - मौलिक अधिकार का महत्त्व
   - मौलिक अधिकार की विशेषताएं
   - भारतीय संविधान के अंतर्गत अनुच्छेद 21 का दायरा
3. नीति निदेशक तत्व में नीति क्या हैं?
4. नीति निदेशक तत्व के महत्त्व/ विशेषताएं और उसकी उपयोगिता
5. राष्ट्रपति की निर्वाचन और उसकी शक्तियाँ
6. भारतीय संसद और संसदीय समितियाँ
7. राज्यपाल का अधिकार और कार्य
   - राज्यपाल की राजनीतिक भूमिका
   - राज्यपाल और राष्ट्रपति की तुलना
8. न्यायपालिका शक्तियाँ एवं विवाद
   - न्यायिक समीक्षा
   - न्यायिक सक्रियता और जनहित याचिका (PIL)
9. पंचायती राजव्यवस्था (बिहार के सन्दर्भ में)
10. चुनाव प्रणाली सुधर समिति
11. केंद्र राज्य संबंध
12. संसदीय लोकतंत्र (बिहार के सन्दर्भ में)
13. संघात्मक/एकात्मक लोकतंत्र
14. आरक्षण + निर्वाचन
15. प्रधानमंत्री/मुख्यमंत्री तथा गठबंधन सरकार
16. ई. शासन
17. धार्मिक मुद्दा
18. भारतीय राजनीति में जाति की भूमिका और जातिगत जनगणना

संविधान की प्रस्तावना

प्रस्तावना/उद्देशिका

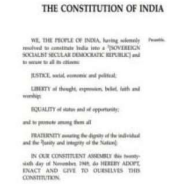

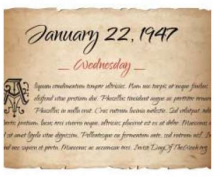

प्रस्तुत	प्रस्तुतकर्ता	अंगीकार
13 दिसंबर,1946	जवाहरलाल नेहरु	22 जनवरी, 1947

परिचय:

- प्रस्तावना संविधान के लिए एक भूमिका या आमुख की भांति है जिसमें संविधान के उद्देश्यों, आदर्शो, शासन प्रणाली के स्वरूपों तथा संविधान के लागु होने की तिथि का उल्लेख किया गया हैं ।
- प्रस्तावना अधिनियम के लक्ष्यों और नीतियों को समझने में सहायक होती हैं।
- भारतीय संविधान की उद्देशिका संविधान निर्माताओं के विचारों को जानने की कुंजी (KEY)है ।
- संविधान विशेषज्ञ एन.ए. पालकीवाला ने प्रस्तावना को संविधान के 'परिचय पत्र' की संज्ञा दी है।
- भारतीय संविधान की प्रस्तावना पं. नेहरू द्वारा बनायी और पेश की गयी थी, जो कि संविधान सभाद्वारा अपनाए गए (उद्देश्य प्रस्ताव) पर आधारित है।
- भारतीय संविधान की प्रस्तावना को उद्देशिका भी कहा जाता है।
- प्रस्तावना, अमेरिका के संविधान से ली गयी है, लेकिन प्रस्तावना की भाषा ऑस्ट्रेलियाई संविधान से ली गयी है।
- 42वें संविधान संशोधन अधिनियम 1976 द्वारा प्रस्तावना में समाजवादी, पंथनिरपेक्ष और अखंडता शब्द को जोड़ा गया है।

संविधान की प्रस्तावना

"हम, भारत के लोग,भारत को एक संपूर्ण प्रभुत्त्व-संपन्न, समाजवादी, पंथनिरपेक्ष, लोकतंत्रात्मक गणराज्य बनाने के लिये तथा
इसके समस्त नागरिकों को:
सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक न्याय,
विचार, अभिव्यक्ति, विश्वास, धर्म और उपासना की स्वतंत्रता,
प्रतिष्ठा और अवसर की समता
प्राप्त कराने के लिये तथा उन सब में
व्यक्ति की गरिमा और राष्ट्र की एकता
तथा अखंडता सुनिश्चित करने वाली
बंधुता बढ़ाने के लिये
दृढ़ संकल्पित होकर अपनी इस संविधान सभा में आज दिनांक 26 नवंबर, 1949 ई. को एतद् द्वारा इस संविधान को अंगीकृत, अधिनियमित और आत्मार्पित करते हैं।

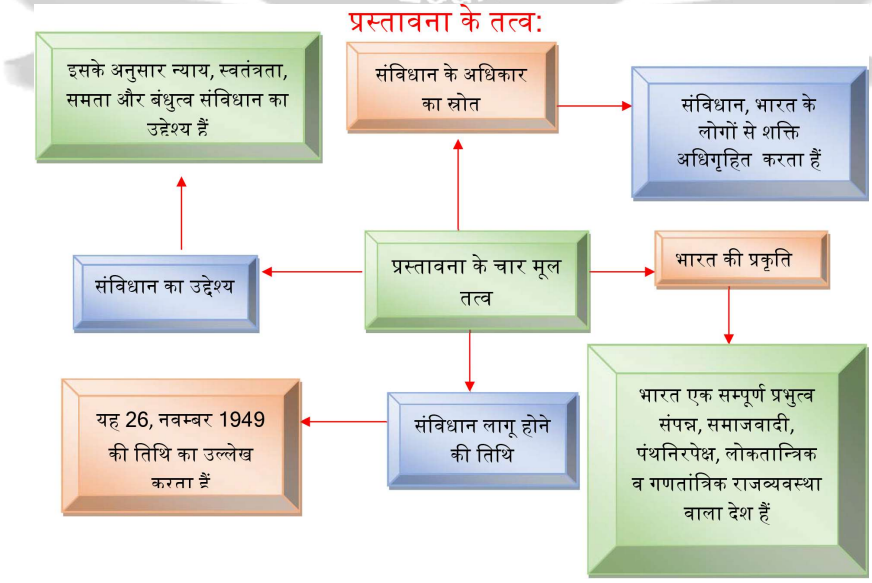

प्रस्तावना में मुख्य शब्द-

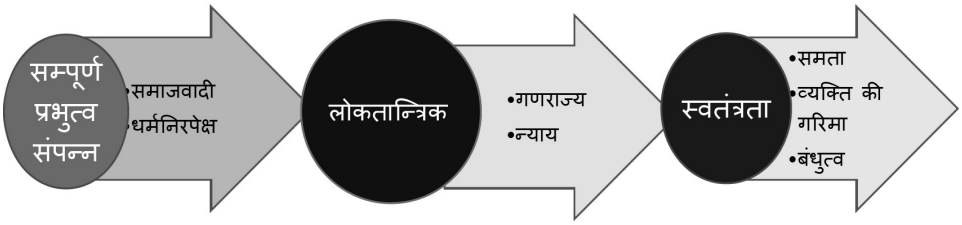

हम, भारत के लोग

- ''हम, भारत के लोग---- अंगीकृत, अधिनियमित, और आत्मार्पित करते है।''
- भारत के लोगों द्वारा ही इस संविधान को बनाया, स्वीकार किया तथा स्वयं को अर्पित अर्थात् अपने ऊपर लागू किया गया है। भारतीय संविधान भारतीय जनता को समर्पित है।

भारतीय संविधान में लोक-प्रभुता का मत

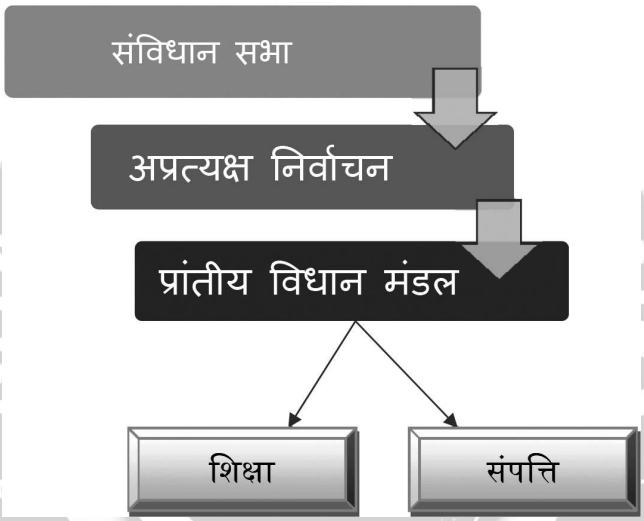

- चूकी संविधान सभा में सदस्यों का निर्वाचन अप्रत्यक्ष तरीकों से हुआ था, इसे देखते हुए प्रसिद्ध राजनैतिक विचारक के.सी.व्हीलर का मानना था कि भारत का संविधान लोक प्रभुता के मत को साकार नहीं करता है। हालाँकि अगर भारतीय संविधान को गौर से पढ़ा जाये तो के.सी. व्हीलर का यह मत सही नहीं होगा।

  यद्धपि भारतीय संविधान सभा के सदस्य जनता द्वारा प्रत्यक्ष निर्वाचित नहीं हुए थे इसके बावजूद वर्ष 1952 के पहले आम चुनाव जो सार्वभौमिक व्यस्क मताधिकार पर आधारित थी, में संविधान सभा के अधिकांश सदस्य जनता के द्वारा भारी बहुमत से निर्वाचित किए गए थे जो उनके जन प्रतिनिधि होने का प्रमाण देता है।

  भारत के संविधान में लोकतांत्रिक शासन प्रणाली को स्वीकार किया गया है और लोक-प्रभुता के बिना कोई भी लोकतंत्र संभव नहीं हो सकता हैं।

संपूर्ण प्रभुत्व सम्पन्न

- संविधान की प्रस्तावना के अनुसार, भारत एक सम्पूर्ण प्रभुत्व सम्पन्न राष्ट्र होगा।
- भारत अपने आन्तरिक एवं बाह्य मामलों में किसी भी विदेशी सत्ता के अधीन नहीं है तथा वह अपनी किसी भी आन्तरिक एवं बाह्य नीति निर्धारित करने के लिए किसी भी राष्ट्र के साथ संधि एवं मित्रता करने के लिए पूर्णत: स्वतन्त्र है।

भूमंडलीकरण के दौर में सम्पूर्ण प्रभुत्व संपन्न की प्रासंगिकता

- भारत एक सम्पूर्ण प्रभुत्व सम्पन्न राष्ट्र है जिसका आशय यह है कि, भारत ना तो किसी अन्य देश पर निर्भर है और ना ही किसी अन्य देश का डोमिनियन है। इसके ऊपर और कोई शक्ति नहीं है और यह अपने आंतरिक और बाहरी मामलों का निस्तारण करने के लिए स्वतंत्र हैं। इसके बावजूद, भूमंडलीकरण के दौर में कुछ ऐसे मुद्दे सामने आये हैं जो वैश्विक मुद्दों का रूप ले चूके है और इन विषयों पर भारत सहित कोई भी देश स्वतंत्र निर्णय लेने में सक्षम नहीं है उदहारण के लिए पर्यावरण, आतंकवाद, परमाणु अस्त्र इत्यादि। इसके अलावा, इस दौर में विश्व व्यापर संगठन, अन्तराष्ट्रीय मौद्रिक कोष और विश्व बैंक जैसी संस्थाओं के निर्देशानुसार आर्थिक नीतियों का संचालन करना पड़ता है जिससे एक प्रकार से संप्रभुता बाधित होती हुई प्रतीत होता है लेकिन अगर इस पर ध्यान देने से यह पता चलता है कि भूमंडलीकरण के दौर में भी भारत को एक सम्पूर्ण प्रभुत्व सम्पन्न राष्ट्र माना जाएगा।

भूमंडलीकरण के दौर में भारत को एक सम्पूर्ण प्रभुत्व सम्पन्न राष्ट्र माने जाने के पीछे मुख्य रूप से दो अहम् करक हैं

पहला कारक

- यद्धपि कुछ वैश्विक मुद्दों पर भारत स्वतंत्र नहीं ले सकता लेकिन अधिकांश मामलों में यह स्वतंत्र निर्णय लेने की शक्ति रखता है।

दूसरा कारक

- जहाँ तक विश्व व्यापर संगठन, अन्तराष्ट्रीय मौद्रिक कोष और विश्व बैंक जैसी संस्थाओं का प्रश्न है भारत इन संगठनों के निर्णय को स्वीकार करता है क्योंकि भारत ने स्वेच्छा से इनकी सदस्यता ग्रहण की है और कभी भी इनकी सदस्यता का परित्याग भी कर सकता है।

यही कारण है कि भूमंडलीकरण के दौर में भी भारत को एक सम्पूर्ण प्रभुत्व सम्पन्न राष्ट्र माना जाएगा।

समाजवाद : (Socialist)

- 'समाजवादी' शब्द संविधान के 1976 में हुए 42 वें संशोधन अधिनियम द्वारा प्रस्तावना में जोड़ा गया। समाजवाद का अर्थ है समाजवादी की प्राप्ति लोकतांत्रिक तरीकों से होती है। भारत ने श्लोकतांत्रिक समाजवादश को अपनाया है। लोकतांत्रिक समाजवाद एक मिश्रित अर्थव्यवस्था में विश्वास रखती है जहां निजी और सार्वजनिक दोनों क्षेत्र कंधे से कंधा मिलाकर सफर तय करते हैं। इसका लक्ष्य गरीबी, अज्ञानता, बीमारी और अवसर की असमानता को समाप्त करना है।
- इंदिरा गांधी ने कहा था कि समाजवाद का हमारा अपना प्रकार है, जहां मिश्रित अर्थव्यवस्था के तहत सार्वजनिक तथा निजी क्षेत्र का सह-अस्तित्व है। भारत को समाजवादी राज्य बनाने के सन्दर्भ में संसाधनों राष्ट्रीयकरण होने के बावजूद राज्य ने जनहित हेतु आर्थिक व्यवस्था में राज्य के हस्तक्षेप के अधिकार को सुरक्षित रखा गया है।
- राज्यको नीति के निदेशक तत्व के अन्तर्गत समाजवादी व्यवस्था को लागू करने हेतु निर्देश देने के लिए अनेक उपबन्ध किये गये हैं। उल्लेखनीय है कि 42वें संविधान संशोधन अधिनियम 1976 द्वारा संविधान की प्रस्तावना में ष्समाजवादी ष शब्द अन्त:स्थापित करके यह सुनिश्चित किया गया कि भारतीय राजव्यवस्था का ध्येय समाजवाद है।
- ध्यातव्य है कि यहां समाजवाद का अर्थ समूहवाद नहीं है, बल्कि इसका अर्थ है, सामाजिक-आर्थिक सुधारों द्वारा सबको समान अवसर उपलब्ध कराना। इसी संशोधन द्वारा कुछ नये निर्देश जोड़कर समाजवादी ढाँचे को और आगे बढ़ाया गया। अनुच्छेद 39श कश अन्त:स्थापित करके राज्य पर कर्त्तव्य डाला गया है कि वह नि:शुल्क विधिक सहायता की व्यवस्था करेगा और इस प्रकार काम करेगा कि सबके लिए समान न्याय सुनिश्चित हो, जैसा कि प्रस्तावना में घोषित है। अनुच्छेद 43श कश अन्त: स्थापित करके राज्य को यह निदेश दिया गया है कि वह उद्योग एवं अन्य उपक्रमों में कर्मकारों का भाग लेना सुनिश्चित करे, आर्थिक न्याय की प्राप्ति के अर्थ में यह समाजवाद की ओर एक सशक्त कदम है।

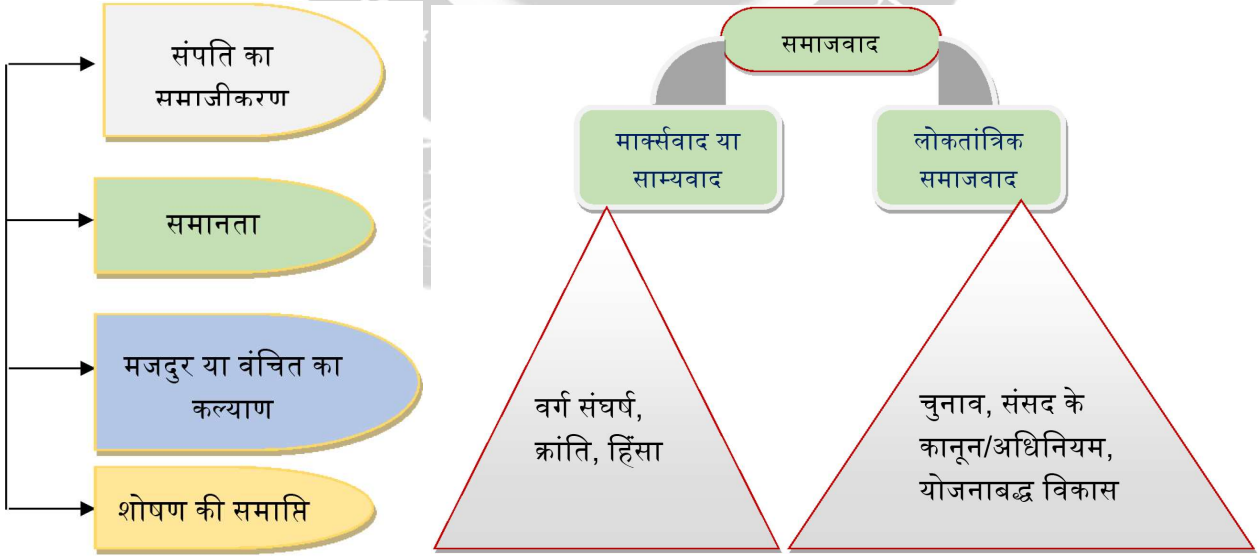

डी. एस. नाकारा बनाम भारत संघ विवाद

- समाजवाद से संविधान का अभिप्राय है- लोकतांत्रिक साधनों से समाज के समाजवादी स्वरूप की प्राप्ति।
- भारतीय समाजवाद मार्क्सवाद और गांधीवाद का मिला-जुला रूप है, जिसमें गांधीवादी समाजवाद की ओर ज्यादा झुकाव है।

भारतीय समाजवाद का प्रारूप

भारतीय समाजवाद लोकतांत्रिक समाजवाद के अधिक निकट है, लेकिन इसे किसी निश्चित विचारधारा में नहीं बाधा जा सकता है। यह तथ्य भारत के समाजवाद को नवीनता प्रदान करता है। इसे एक न्यायलय के निर्णयों में देखा जा सकता है-

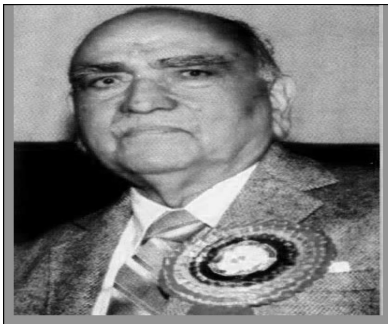

इस मामले में सर्वोच्च न्यायालय ने निर्धारित किया कि भारत में समाजवाद एक नीति है, विचारधारा नहीं। इसका अर्थ है कि भारत के समाजवाद को किसी सिद्धांत में बांधकर परिभाषित नहीं किया जा सकता बल्कि इसे सरकार की व्यावहारिक नीतियों में ढूंढा जाना चाहिए। न्यायालय के अनुसार भारत के समाजवाद में निम्न बातें शामिल हैं जैसेकि-

- संपत्ति के केन्द्रीकरण को रोकना।
- नागरिकों के बीच आय की असमानता को कम करना।
- मजदुर और वंचित लोगों जा कल्याण करना।
- सभी प्रकार के शोषण को समाप्त करना।

इस प्रकार भारतीय समाजवाद का मूल आधार संपत्ति के निजीकरण नहीं है बल्कि भारतीय समाजवाद का मुख्य आधारसमानता और शोषण विहीनता है। भारत में सरकार के वे सारे कार्य समाजवादी नहीं मने जायेंगे जो समानता, शोषणविहीनता और वंचित वर्गों के कल्याण से संबंधित हैं।

नई आर्थिक नीति और भारतीय समाजवाद

वर्ष 1991 में आई नई आर्थिक नीति ने राजनैतिक विचारको को दो मतों में बाँट दिया।

यही कारण है कि कुछ इसे भारतीय समाजवाद के सामने खतरा मानते है तो कुछ इसे खतरा नहीं मानते है। हम ऐसे विचारकों को एक आरेख के माध्यम से दर्शाना चाहते है-

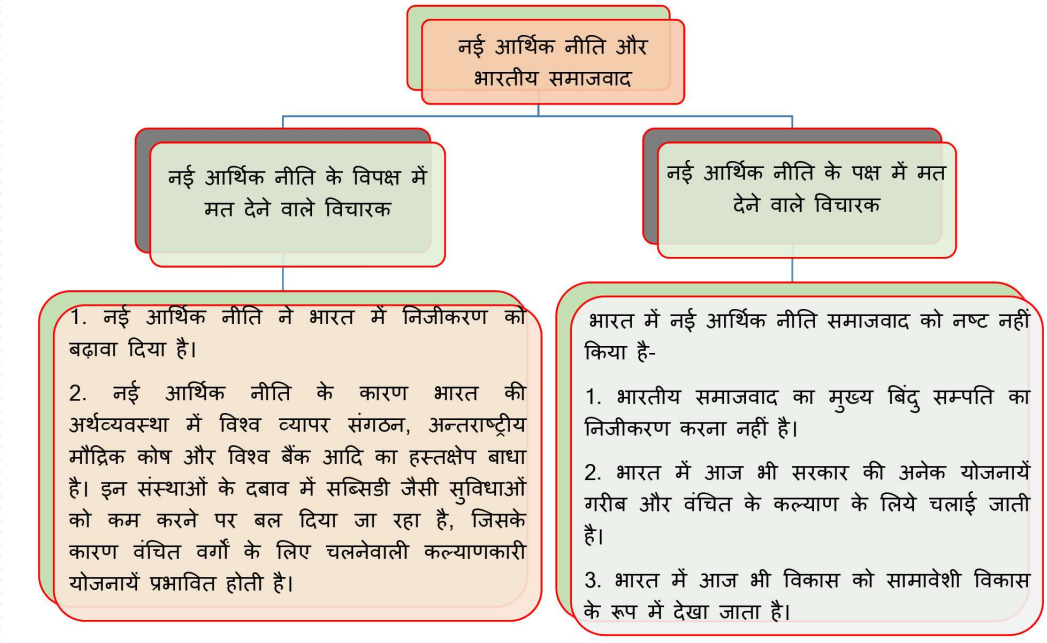

पंथनिरपेक्ष राज्य

42वां संविधान संशोधन ने पंथ निरपेक्षता शब्द को संविधान की प्रस्तावना में उल्लिखित कर इस सिद्धान्त को औपचारिक रूप से अभिव्यक्त किया, जो मूल संविधान में पहले से ही अन्तर्निहित था। प्रस्तावना में जिस विश्वास, धर्म और उपासना की स्वतंत्रता का वचन दिया गया है उसे संविधान के भाग III के अनुच्छेद 25-28 में धर्म की स्वतंत्रता से सम्बन्धित सभी नागरिकों को मूल अधिकार के रूप में समाहित कर

क्रियान्वित किया गया है, इसमें अनुच्छेद 27 एवं 28 उल्लेखनीय है -

अनुच्छेद 27 : यह घोषणा करता है कि राज्य किसी नागरिक या संस्था को किसी विशिष्ट धर्म या धार्मिक संस्था को पोषण हेतु करों की अदायगी करने के लिए बाध्य नहीं करेगा।

अनुच्छेद 28 : राज्य से मान्यता प्राप्त या राज्य निधि से सहायता पाने वाली शिक्षा संस्थान में उपस्थित होने वाले व्यक्ति को ऐसी संस्था में दी जाने वाली धार्मिक शिक्षा में भाग लेने के लिए उसकी अथवा उसके संरक्षक की सहमति के बिना बाध्य नहीं किया जाएगा। संक्षेप में राज्य के स्वामित्व की शिक्षा संस्था में धार्मिक शिक्षा पूर्णत: प्रतिषिद्ध है, साम्प्रदायिक संस्थाओं में यह पूर्णत: प्रतिषिद्ध नहीं है, किन्तु इसे अन्य धर्मावलम्बियों पर उसकी सहमति के बिना अधिरोपित नहीं किया जा सकता।

- भारत एक पंथनिरपेक्ष राज्य है, इसका तात्पर्य यह नहीं है कि भारत एक धर्म विहीन या अधार्मिक या धर्म विरोधी राज्य है।
- भारत में मूल अधिकारों के तहत प्रत्येक व्यक्ति को धार्मिक मामलों में संरक्षण प्राप्त है। (अनुच्छेद 25-28)
- 'पंथनिरपेक्ष' शब्द मूल प्रस्तावना में नहीं था।
- 42वां संविधान संशोधन 1976 द्वारा संविधान की उद्देशिका में समाजवादी, पंथनिरपेक्ष और अखण्डता शब्दों को जोड़ा गया है।

भारतीय पंथ निरपेक्षता का मूल स्वरुप

भारतीय पंथ निरपेक्षता का मूल स्वरुप सर्व धर्म संभाव है और इसी रूप में यह पश्चिमी पंथ निरपेक्षता से अलग है। भारत एवं यूरोप दोनों में सार्वजनिक जीवन में धर्म से तटस्थ रहने का प्रावधान है और व्यक्तिगत जीवन में प्रत्येक नागरिक को धार्मिक स्वतंत्रता प्रदान किया है, लेकिन भारत में व्यक्तिगत धार्मिक स्वतंत्रता के क्षेत्र में राज्य से यह अपेक्षा की जाती है कि वह धर्म की उन्नति की बात करेगा तो यह सभी धर्मों के साथ सामान व्यवहार करेगा जिसे सर्व धर्म संभाव की नीति कहा जाता है।

क्या भारत एक पंथ निरपेक्ष राज्य है?

भारत को एक पंथ निरपेक्ष राज्य कहने के पीछे निम्नलिखित बिंदु को देखा जा सकता है-

- संविधान की प्रस्तावना भारत को पंथ-निरपेक्ष घोषित करती है।
- भारत में राज्य का कोई राजकीय धर्म नहीं है।
- भारत में समानता का अधिकार एक मौलिक अधिकार है जो धर्म के आधार पर भेदभाव को माना करता है।

- भारत में धार्मिक स्वतंत्रता का अधिकार एक मौलिक अधिकार है, जो सभी नागरिकों को चाहे वह किसी भी धर्म के अनुयायी हो,को धार्मिक स्वतंत्रता का अधिकार देता है।

व्यवहार में भारतीय राजनीति में धर्म की भूमिका पाई जाती है-

1. चुनाव में धर्म की भूमिका

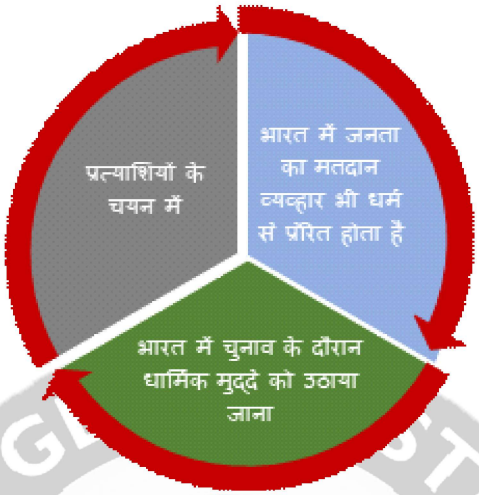

2. भारत में मंत्रिपरिषद का गठन और सरकारी पदों के वितरण में भी अप्रत्यक्ष रूप से व्यावहार में धर्म की भूमिका होती है।
3. भारत में कई बार सरकार की नीतियाँ भी व्यवहार में धर्म से प्रेरित होती है।

लोकतंत्रात्मक

- शासन संचालन की शक्ति/संप्रभुता भारत की जनता में निहित है।
- भारत प्रतिनिधिमूलक लोकतंत्र की व्यवस्था का पालन करता है, जिसमें सांसदों तथा विधायकों का सीधे जनता द्वारा निर्वाचन किया जाता है।
- पंचायतों व नगरपालिकाओं के माध्यम से लोकतंत्र को अत्यन्त निचले स्तर पर लाए जाने का प्रयास किया गया है। (73वां तथा 74वां संविधान संशोधन अधिनियम 1992 एवं 1993)

डॉ. अम्बेडकर के अनुसार "राजनीतिक लोकतंत्र तब तक स्थायी नहीं बन सकता जब तक कि उसके मूल में सामाजिक लोकतंत्र नहीं हो।"

गणराज्य

- गणतंत्र अथवा गणराज्य में राज्य का प्रमुख, परोक्ष रूप से लोगों द्वारा निर्वाचित व्यक्ति होता है।
- भारत का राष्ट्रपति लोगों द्वारा परोक्ष रूप से चुना जाता है तथा मंत्रिपरिषद् की सहायता से देश के शासन को संचालित करता है।
- इसमें कोई वंशानुगत शासक नहीं होता एवं राज्य का अध्यक्ष लोगों द्वारा एक निश्चित अवधि के लिए चुना जाता है।

- इसके अन्तर्गत सामाजिक, आर्थिक और राजनैतिक न्याय रूसी क्रांति से प्रेरित है।
- किसी वर्ग के विशेषाधिकारों का उल्लघंन न हो ताकि शांतिपूर्ण व समृद्ध राष्ट्र की रचना हो सके।
- किसी भी प्रकार की अर्हता के बिना सार्वभौम वयस्क मताधिकार के द्वारा भारत में राजनैतिक न्याय सुनिश्चित किया गया है।

- पिछड़े हुए नागरिकों के लिए आरक्षण (अनुच्छेद 15(4)) उपाधियों का अन्त (अनुच्छेद 18) तथा अस्पृश्यता का उन्मूलन (अनुच्छेद 17) के द्वारा सामाजिक न्याय को सुनिश्चित किया गया है।

स्वतंत्रता

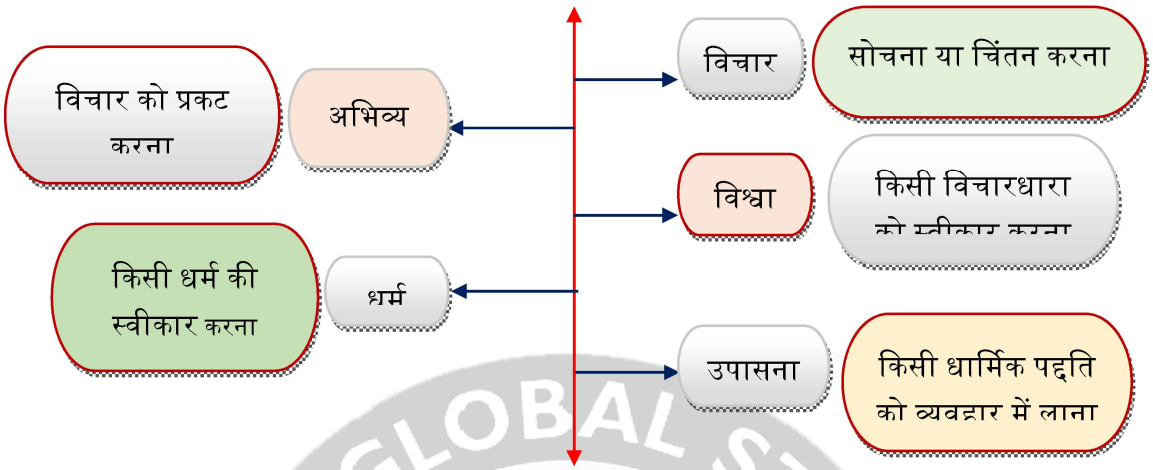

- इसका तात्पर्य है कि व्यक्ति की गतिविधियों पर किसी प्रकार के प्रतिबंध का निषेध तथा उसे संपूर्ण विकास के अवसर उपलब्ध कराना।
- भारतीय संविधान के अनुच्छेद 19 के अर्न्तगत व्यक्तियों को 6 लोकतांत्रिक स्वतंत्रताओं तथा अनुच्छेद 25-28 के अर्न्तगत धार्मिक स्वतंत्रता के अधिकार को सुनिश्चित किया गया है।

समता:

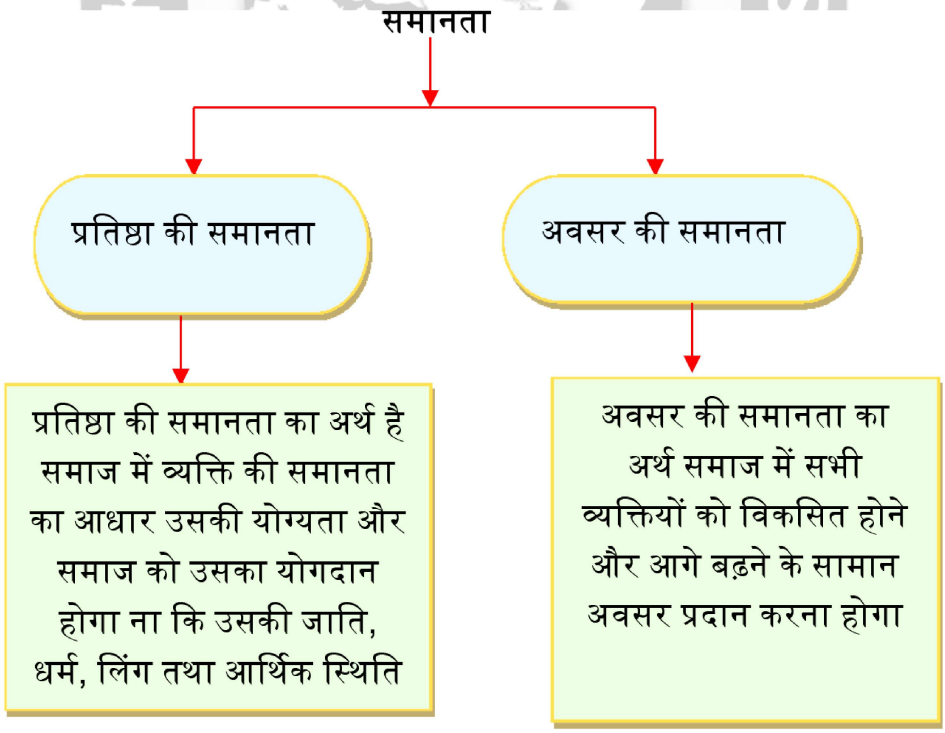

- इसका अर्थ है कि समाज के किसी भी वर्ग को कोई विशेषाधिकार नहीं और बिना किसी भेदभाव के प्रत्येक व्यक्ति को समान अवसर प्रदान करने के उपबंध।
- भारतीय संविधान केवल धर्म, मूलवंश, जाति, लिंग या जन्म-स्थान इनमें से किसी के आधार पर राज्य द्वारा किसी भी विभेद को अवैधानिक घोषित करता है। (अनुच्छेद 15)

➢ यह संरक्षणात्मक विभेद अर्थात् उक्त वर्गो के संरक्षण हेतु किया गया सकारात्मक भेदभाव है।

भारतीय संविधान की प्रस्तावना में समानता के 3 आयाम शामिल है-

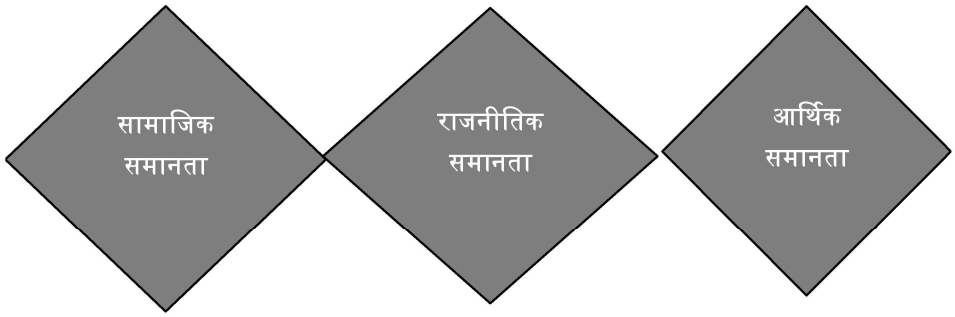

बंधुत्व

➢ इसका तात्पर्य है कि सभी नागरिकों के बीच एक होने के भाव को जागृत करना और सर्वमान्य भाईचारे का विकास करना।

➢ भारतीय संविधान एकल नागरिकता तथा मौलिक कर्त्तव्य अनुच्छेद 51 (क) के माध्यम से बंधुत्व की भावना को प्रोत्साहित करता है।

व्यक्ति की गरिमा:

➢ के.एम. मुंशी के अनुसार '' व्यक्ति के गौरव का अर्थ यह है कि संविधान न केवल वास्तविक रूप से भलाई तथा लोकतांत्रिक तंत्र की मौजूदगी सुरक्षित करता है बल्कि व्यक्ति यह भी मानता है कि हर व्यक्ति का व्यक्तित्व पवित्र है। प्रस्तावना में उल्लेखित मौलिक अधिकार में अनुच्छेद 21 को व्यापकता प्रदान की गयी है।''

➢ भारतीय संविधान में जिस बंधुता की विवेचना की गई है वह राष्ट्र की सीमा तक सिमित नहीं है बल्कि यह "वसुधैव कुटुम्बकम" की उक्ति के अनुसार सम्पूर्ण विश्व के लोगों को भाई मानने के लिए तैयार है। इसे भारतीय संविधान के अनुच्छेद 51में इस प्रकार देखा जा सकता हैं-

अनुच्छेद-51- अन्तराष्ट्रीय शांति व सुरक्षा की अभिवृद्धि, राज्य-

51(क)- अन्तराष्ट्रीय शांति व सुरक्षा की अभिवृद्धि।

51(ख)- राष्ट्रों के बीच न्याय संगत और सम्मान पूर्ण संबंधों को बनाए रखना।

51(ग)- संगाठित लोगों के एक दूसरे से व्यवहारों में अन्तराष्ट्रीय विधि और संधि बाध्यताओं के प्रति के आदर बढ़ाना।

51(घ)- अन्तराष्ट्रीय विवादों के मध्यस्थों द्वारा निपटारे के लिए प्रोत्साहन देने का प्रयास करना।

एकता और अखंडता

एकता एक मनोवैज्ञानिक संकल्पना है जो नागरिको के बिच एक होने की भावना को बढ़ावा देती हैं

अखंडता एक भौगोलिक संकल्पना है जो इस बात पर बल देती है कि भारत का क्षेत्र या भूभाग उससे अलग ना हो

प्रस्तावना का महत्व

प्रस्तावना के महत्व को ध्यान में रखते हुवे कुछ राजनीतिक विचारकों ने अपने-अपने तर्क प्रस्तुत किया हैं जिसे एक तालिका के माध्यम से दर्शाया गया है-

क्र. सं.	विचारक/विद्वान	संबंधित कथन
1.	सर अल्लादी कृष्णस्वामी अय्यर	"संविधान की प्रस्तावना हमारे दीर्घकालिक सपनों का विचार है।"
2.	के.एम. मुंशी	"हमारी संप्रभु लोकतांत्रिक गणराज्य का भविष्य फल है।"
3.	पं. ठाकुर दास भागर्व	"प्रस्तावना, संविधान का सबसे सम्मानित भाग है। यह संविधान की आत्मा है। यह संविधान की कुंजी है। यह संविधान का आभूषण है। यह एक उचित स्थान है जहां से कोई भी संविधान का मूल्यांकन कर सकता है।"
4.	भारत के पूर्व मुख्य न्यायाधीश एम-हिदायतुल्लाह	"प्रस्तावना अमेरिका की स्वतंत्रता की घोषणा के समान है , लेकिन यह एक घोषणा से भी ज्यादा है। यह हमारे संविधान की आत्मा है , जिसमें हमारे राजनीतिक समाज के तौर तरीकों को दर्शाया गया है। इसमें गंभीर संकल्प शामिल है, जिन्हें एक क्रांति ही परिवर्तित कर सकती है।"
5.		इसमें राजनीतिक, धार्मिक व नैतिक मूल्यों का उल्लेख किया गया है।
6.		प्रस्तावना, संविधान विस्तृत विवरण का संक्षिप्त स्वरूप है।

प्रस्तावना संविधान का अंग है या नहीं?

प्रस्तावना संविधान का अंग है या नहीं इसको ले कर जब भी विवाद हुआ है तब उच्चतम न्यायालय ने अपना फैसला दिया हैं। सर्वोच्च न्यायालय द्वारा दिया गया फैसला निम्नलिखित प्रकार का है जिसे एक तालिका के माध्यम से दर्शाया गया हैं।

क्र. सं.	वर्ष	वाद/मामला	सर्वोच्च न्यायालय का फैसला
1.	1950	गोपालन वाद	संविधान का भाग नहीं , न्यायालय द्वारा प्रवर्तनीय नहीं , शक्ति का स्रोत नहीं।
2.	1960	बेरूबारी मामला	मार्गदर्शक सिद्धांत , संविधान का भाग नहीं।
3.	1973	केशवानंद भारती वाद	संविधान के भाग के रूप में स्वीकार किया गया।
4.	1980	एस.आर. बोम्मई वाद	प्रस्तावना संविधान का अभिन्न अंग है।
5.	1995	एलआईसी मामला	प्रस्तावना संविधान का आंतरिक हिस्सा।न्यायमूर्ति रामास्वामी ने पूर्व के निर्णय को खारिज करते हुए कहा

केशवानंद भारती बनाम केरल राज्य वाद,1973

सरकारी पक्ष

यह कहा गया चूकी प्रस्तावना संविधान का अंग है अतः अनुछेद 368 के तहत संसद संशोधन कर सकती हैं

प्रतिवादी पक्ष

यह कहा गया कि प्रस्तावना संविधान का सारतत्व है, अतः संसद को संशोधन का अधिकार देने से इसकी आत्मा खंडित हो सकती हैं

सर्वोच्च न्यायलय का फैसला , (मध्यम मार्ग)

सर्वोच्च न्यायलय ने कहा कि संसद प्रस्तावना में संशोधन कर सकती है, शर्त यह है कि संविधान के मौलिक ढांचा का उल्लंघन ना हो

प्रस्तावना को संविधान को भाग मानते हुए कहा गया कि अनुच्छेद 368 के अधीन संविधान की प्रस्तावना में भी संशोधन किया जा सकता है, पर ऐसा संशोधन मूल ढाँचे का उल्लंधन करने वाला नहीं होना चाहिए।

क्र. सं.	राजनीतिक विचारक	महत्वपूर्ण कथन
1.	के.एम. मुंशी	"उद्देशिका हमारे संप्रभु लोकतांत्रिक गणराज्य का होरोस्कोप है।"
2.	अर्नेस्ट बार्कर	"उद्देशिका संविधान की कुंजी है।"
3.	ननी ए . पालकीवाल	"उद्देशिका संविधान का परिचय पत्र है।"
4.	ठाकुर दास भार्गव	उद्देशिका संविधान की आत्मा है। यह संविधान का बहुमूल्य रत्न है। यह वह मापदण्ड है जिससे संविधान के मूल्य का आकलन किया जा सकता हैं।
5.	अल्लादि कृष्ण स्वामी अय्यर	उद्देशिका उन आदर्शों को अभिव्यक्त करती है जिन्हें वर्षों पहले हमने स्वप्न के रूप में संजोया था।
6.	गोलकनाथ बनाम पंजाब राज्य	उद्देशिका में जनता की भावनाएं और अकांक्षाएं सूक्ष्म रूप में समाविष्ट हैं।

मुख्य परीक्षा से संबंधित संभावित प्रश्न :

Q.1) भारतीय संविधान की प्रस्तावना क्या है? इसके मूल घटकों की चर्चा करते हुए प्रस्तावना में हुए कुछ प्रमुख संशोधनों की विस्तृत चर्चा कीजिए। (38 Marks)

Ans: Introduction + Definition + Components + Act & Amendment + Conclusion (your answer between 350 to 500 words)

Q.2) 42वां संविधान संशोधन अधिनियम, 1976 द्वारा प्रस्तावना में शामिल किए गए 'धर्मनिरपेक्षता, अखण्डता तथा समाजवादीश शब्दों का उल्लेख करें। (38 Marks)

Ans: Introduction + Act & Amendment + Explanation + Conclusion (your answer between 350 to 500 words)

Q.3) उन संवैधानिक उपबन्धों का उल्लेख करें जिनके द्वारा भारत को समाजवादी, धर्मनिरपेक्ष, लोकतांत्रिक गणराज्य बनाने हेतु क्रियान्वित किया गया है। (38 Marks)

Ans: Introduction + Act & Amendment + Explanation + Conclusion (your answer between 350 to 500 words)

Q.4) "भारतीय संविधान अपनी प्रस्तावना में भारत को एक समाजवादी, धर्मनिरपेक्ष, लोकतांत्रिक गणराज्य घोषित करता है । इस घोषणा को क्रियान्वित करने के लिए कौन-से संवैधानिक उपबंध दिए गए हैं? (38 Marks) (64th BPSC)

Ans: Introduction + Act & Amendment+Explanation + Conclusion (your answer between 350 to 500 words)

Q.5) प्रस्तावना की मूल शब्दों की व्याख्या करें । (Short Question) (9.5 Marks)

Ans: Introduction (30 to 50 words) + Explanation (only 50 to 80 words) +Conclusion (20 to 30 words)

Q.6) भारत के संविधान की प्रस्तावना में समाजवादी से आप क्या समझते हैं? (Short Question) (9.5 Marks)

Ans: Introduction (30 to 50 words) + Explanation (only 50 to 80 words) + Conclusion (20 to 30 words)

Q.7) प्रस्तावना का संक्षिप्त परिचय दें। (Short Question / Full Question Ans: आप सभी की पॉइंट्स या हैडिंग (key points or headings) वाले पाट्र्स को शार्ट करके लिखे।

Q.8) प्रस्तावना में हुए महत्वपूर्ण संशोधन की चर्चा करें। (short Question) (9.5 Marks)

Ans: Introduction (30 to 50 words) +Act & Amendment (50 to 80 words) +Conclusion (20 to 30 Words) (your answer between 150 to 200 words)

Q.9) भारतीय संविधान की प्रस्तावना की प्रासंगिकता क्या है? (Full Question / Short Question)

Ans: Introduction + Explanation + conclusion (According to question you should Write the answer, If short question your answer between 150 to 180 Words and if you have full question then your answer between 350 to 500 words)

मौलिक अधिकार

- मौलिक अधिकार से सम्बन्धित कुछ प्रमुख विद्वानों का कथन

क्रम सं.	विद्वान	कथन
1.	न्यायमूर्ती गजेन्द्र गडकरी	भारतीय संविधान द्वारा लाई गयी लोकतांत्रिक पद्धति की ठोस नीव मौलिक अधिकार ही है।
2.	एम.वी.पायली	"मूल अधिकार एक ही समय पर शासकीय शक्ति से व्यक्तिक स्वतंत्रता की रक्षा करते हैं और शासकीय शक्ति द्वारा व्यक्तिक स्वतंत्रता को सीमित करते हैं। इस प्रकार मूल अधिकार व्यक्तिक और राज्य के बीच सामंजस्य स्थापित कर राष्ट्रिय एकता और शक्ति में वृद्धि करते हैं।"
3.	न्यायमूर्ति श्री के सुब्बाराव	"मौलिक अधिकारों के महत्त्व पारस्पर प्राकृतिक अधिकार का दूसरा नाम है।"

- भारतीय संविधान की प्रस्तावना में व्यक्ति की गरिमा, विचार, अभिव्यक्ति, विश्वास, धर्म और उपासना की स्वतंत्रता तथा प्रतिष्ठा और अवसर की समता का उल्लेख किया गया गया हैं। इन्हीं प्रावधानों को सुनिश्चित करने के लिए ही भारतीय संविधान के भाग-3 में अनुच्छेद 12-35 के मध्य मौलिक अधिकार को समाहित किया गया है।

  मूल अधिकार जो भारतीय संविधान की एक प्रमुख विशेषता है, इसके बावजूद भी इसे संविधान द्वारा परिभाषित नहीं किया गया है। हालाँकि इसमें उन आधारभूत अधिकारों का समावेश किया गया है जो व्यक्ति के व्यक्तित्व के विकास के लिए नितांत आवश्यक है। वास्तव में मौलिक अधिकार वैसे अधिकार हैं जो नागरिकों के नैतिक, बौद्धिक और अध्यात्मिक विकास के लिए अनिवार्य है। अर्थात या ह अधिकार मानव के व्यक्तित्व के सम्पूर्ण विकास, स्वतंत्रता और समानता के साथ-साथ भली-भांति जीवन यापन करने तथा शोषण मुक्त समाज के निर्माण के लिए आवश्यक है। इस प्रकार मूल अधिकार वे अधिकार है जो व्यक्ति के जीवन के लिए मूलभूत तथा अपरिहार्य होने के कारण संविधान द्वारा नागरिकों को प्रदान किए गए हैं। सामान्यत: व्यक्ति के इन अधिकारों में राज्य के द्वारा भी हस्तक्षेप नहीं किया जा सकता। यही कारण है कि 1789 ई. में फ्रांस के शासक लुई सोलहवे को मूल अधिकार के उल्लंघन के कारण फांसी पर चढ़ा दिया गया था। इससे यह स्पष्ट होता है कि मौलिक अधिकारों का उद्देश्य नागरिकों के व्यक्तित्व का विकास करना, सर्कार की शक्ति को परिसीमित करना तथा व्यक्ति के सामान्य हितों की अभिवृद्धि तथा रक्षा करने वाली सरकार की स्थापना करना है।
- मौलिक अधिकार का उद्देश्य वस्तुत: राजनितिक लोकतंत्र की भावना को प्रोत्साहित करना है। यह कार्यपालिका और विधायिका के मनमाने कानूनों पर निरोधक की तरह कम करता है। इसके उल्लंघन की स्थिति में इन्हें न्यायलय के माध्यम से लागू किया जा सकता है। जिस व्यक्ति के मौलिक अधिकार का हनन हुआ है, वह सीधे उच्चतम न्यायलय जा सकता है, जो अधिकारों की रक्षा के लिए बंदी प्रत्यक्षीकरण, परमादेश, प्रतिषेध, अधिकार पृच्छा व उत्प्रेषण जैसे अभिलेख या ॅतपज जारी कर सकता है। यही कारण है कि इसे सीमित सरकार या Limited Government कहा जाता है।

  हालाँकि मौलिक अधिकार कुछ सीमाओं के दायरे में आता है लेकिन ये अपरिवर्तनीय भी नहीं है। संसद इन्हें संविधान संशोधन अधिनियम के माध्यम से समाप्त कर सकती है। अनुच्छेद 20-21 द्वारा प्रदत्त अधिकारों को छोड़कर अधिकारों को छोड़कर राष्ट्रीय आपातकाल के दौरान इन्हें भी स्थगित किया जा सकता है।

मौलिक अधिकार का ऐतिहासिक पृष्ठभूमि

ऐतिहासिक पृष्ठभूमि		
क्रम सं	वर्ष	व्याख्या
1.	1215	सर्वप्रथम 1215 ई. में ब्रिटेन के तत्कालीन सम्राट जॉन द्वारा हस्ताक्षरित अधिकार पत्र (Magna carta) है। इसके द्वारा सम्राट ने ब्रिटिश नागरिकों को कुछ मुलभूत अधिकारों की सुरक्षा का आश्वासन दिया था।
2.	1689	1689 ई. में लिखित बिल ऑफ राइट्स मूल अधिकारों के सम्बन्ध में एक अन्य प्रमुख दस्तावेज है इसमें विभिन्न सम्राटों द्वारा समय-समय पर ब्रिटिश नागरिकों को प्रदत महत्वपूर्ण अधिकारों एवं स्वतंत्रताओं का संकलन किया है।
3.	1791	अमेरिका के मूल संविधान में मौलिक अधिकारों का उल्लेख नहीं था किन्तु 1791 ई. में 'अधिकार-पत्र' (Bill of Rights) को जोड़ा गया।

मौलिक अधिकारों से संबंधित कुछ प्रमुख तथ्य-

मौलिक अधिकारों को निम्नलिखित 8 भागों में विभाजित किया जा सकता हैं जिसे एक आरेख के माध्यम से दर्शाया जा सकता है-

1. **मूल संविधान में मौलिक अधिकारों को सात समूहों में वगीकृत किया गया था-**

(i) समता का अधिकार - (अनुच्छेद 14-18)

(ii) स्वतंत्रता का अधिकार (अनुच्छेद 19-22)

(iii) शोषण के विरूद्ध अधिकार (अनुच्छेद 23-29)

(iv) धार्मिक स्वतंत्रता का अधिकार - (अनुच्छेद 25-28)

(v) संस्कृति व शिक्षा संबंधी अधिकार - (अनुच्छेद 29-30) 3

(vi) संपत्ति का अधिकार - (अनुच्छेद 31)

(vii) संपत्ति का अधिकार - (अनुच्छेद 31)

भारत के तत्कालीन प्रधानमंत्री मोरारजी देसाई की सरकार के दौरान 44वें संविधान संशोधन अधिनियम, 1978 द्वारा अनुच्छेद 31(1) को मौलिक अधिकार की श्रेणी से हटाकर अनुच्छेद 300 क के रूप में संविधान के भाग 12 के अध्याय 4 में शामिल किया गया। इस संशोधन के पश्चात् निम्नलिखित परिणाम देखने को मिला जिसे एक आरेख के माध्यम से दर्शाया गया है-

44वें संविधान संशोधन अधिनियम, 1978

यदि संघ की संसद किसी व्यक्ति को उसकी संपत्ति से वंचित करने हेतु कानून बनाता है तो वह व्यक्ति अनुच्छेद 19 (1) (च) के अंतर्गत ऐसे कानून द्वारा आरोपित बंधन पर युक्ति युक्त न होने का आरोप नहीं लगा सकता ।

अनुच्छेद 31 के वंड (2) का लोप कर दिया गया है। इसी कारण किसी व्यक्ति की संपत्ति ले लिये जाने पर उसे मुआवजा (प्रतिकर) दिए जाने संबंधित मामले पर विधायिका के विरूद्ध व्यक्ति का कोई अधिकार नहीं होगा ।

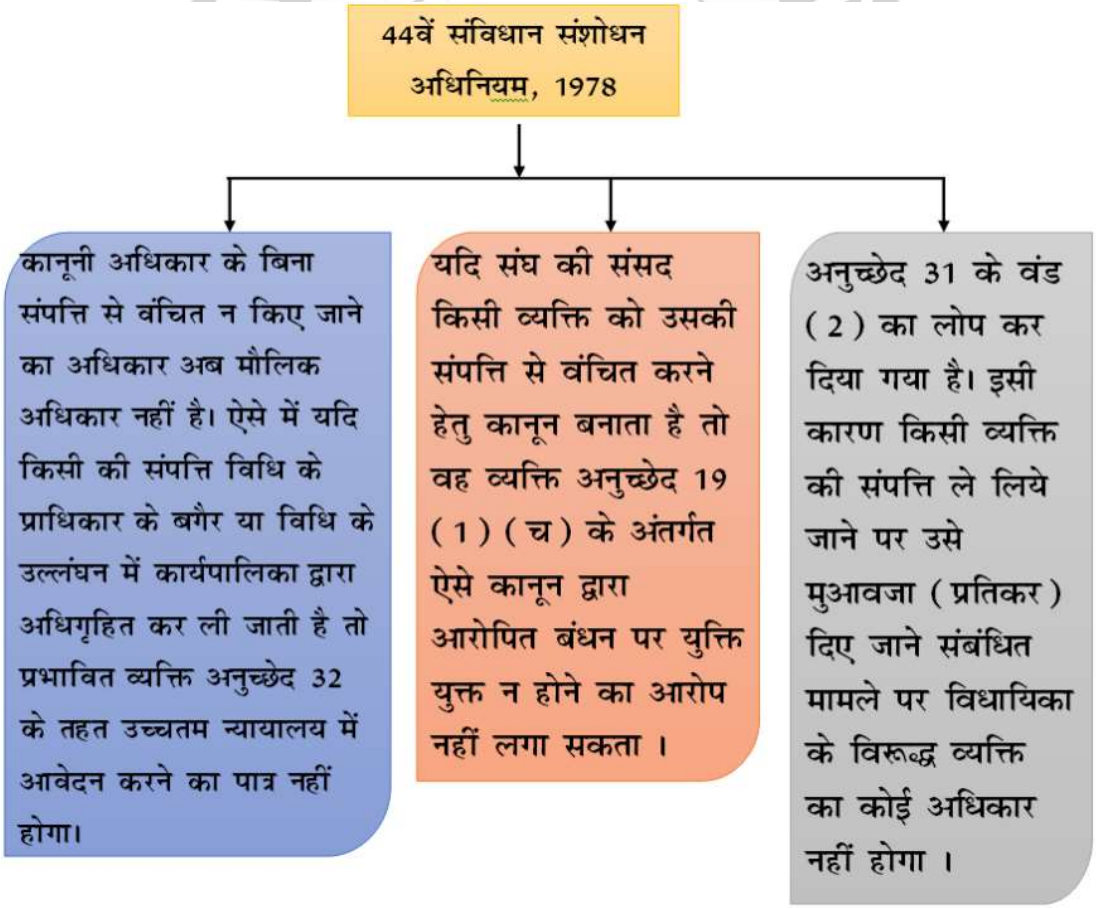

किंतु 25वें संविधान संशोधन अधिनियम, 1971 द्वारा इंदिरा गांधी ने 'प्रतिकर' शब्द की जगह 'रकम' शब्द रखा जिसकी पर्याप्तता के संबंध में न्यायालय में मामले को नहीं ले जाया जा सकता था। ऐसे में उच्चतम न्यायलय ने यह निर्धारित किया कि यदि प्रभावित व्यक्ति को दी गई रकम काल्पनिक हो या रकम इतनी कम हो कि एक प्रकार से उस संपत्ति का अधिग्रहण हो जाए तो प्रभावित व्यक्ति न्याय की गुहार कर सकता है। उच्चतम न्यायालय का यह निर्णय केशवानंद भारती बनाम केरल राज्य (1973) मामले में सामने आया था। किंतु 44वें संविधान संशोधन के बाद यह संभावना मिटा दी गई।

2. वैसे मौलिक अधिकार जो सिर्फ भारतीय नागरिको प्रदत्त हैं-

- अनु० 15 - धर्म, मूलवंश, जाति, लिंग या जन्मस्थान आधार पर विभेद की मनाही।
- अनु० 16 - लोक नियोजन के विषय में अवसर समता ।
- अनु० 19 - वाक् स्वतंत्रता, संगम बनाने, निवास, एक स्थान से दूसरे स्थान पर जाने और एक जग होने की स्वतंत्रता।
- अनु. 29-30- अल्पसंख्यकों को संस्कृति और शिक्षा संबंधी अधिकार।

3. ऐसे मौलिक अधिकार जो समान रूप से नागरिक एवं विदेशियों को प्राप्त है-

- अनु 14- विधि के समक्ष समता और विधि का समान संरक्षण।
- अनु 20- अपराधों के लिए दोष सिद्धी के संबंध संरक्षण।
- अनु 21- प्राण और दैहिक स्वतंत्रता का अधिकार।
- अनु० 23- शोषण के विरूद्ध अधिकार।
- अनु० 25- धार्मिक स्वतंत्रता का अधिकार ।
- अनु० 27- किसी विशिष्ट धर्म की अभिवृद्धि के लिए कर न देने की स्वतंत्रता ।
- अनु० 28- शिक्षण संस्थाओं में धार्मिक शिक्षा या धार्मिक उपासना में शमिल होने की स्वतंत्रता ।

4. कुछ ऐसे मौलिक अधिकार जिनकी प्रकृति नकारात्मक है अर्थात् वे राज्य के विरूद्ध प्रतिषेध लगाते हैं-

- अनु० 15 (1)
- अनु० 16 (2)
- अनु०18 (1)
- अनु 20
- अनु० 22 (1) और
- अनु० 28 (1)

5. ऐसे मौलिक अधिकार जिनकी प्रकृति सकारात्मक है और इस कारण वे व्यक्ति को कुछ सुविधाएं प्रदान करते हैं-

- अनु० 25
- अनु० 29(1) और

- अनु० 30 (1)

6. वैसे मौलिक अधिकार जो कार्यपालिका के विरूद्ध प्राप्त हैं किंतु विधायिका पर किसी प्रकार का प्रतिबंध नहीं लगाते–

अनु 21– इस अनुच्छेद के प्रावधानों के अनुसार किसी व्यक्ति को उसके प्राण या दैहिक स्वतंत्रता के अधि कार से कानून या विधि द्वारा स्थापित प्रक्रिया के अनुसार ही वंचित किया जाएगा, अन्यथा नहीं।

गोपालन बनाम मद्रास राज्य मामले में उच्चतम न्यायालय ने यह निर्णय दिया था कि दैहिक स्वतंत्रता से वंचित करने के लिए विधायिका प्रक्रिया को निर्धारित कर सकती है और न्यायालय इस आधार पर उसमें हस्तक्षेप नहीं कर सकते हैं कि वह न्यायपूर्ण या युक्ति युक्त नहीं है। स्पष्ट है अनु० 21 विधायिका पर किसी प्रकार का प्रतिबंध आरोपित नहीं करता है बल्कि यह सिर्फ यह सुनिश्चित करता है कि कार्यपालिका विधि के अनुसार निर्धारित प्रक्रिया तथा विधि के प्राधिकार के बगैर किसी प्रकार से व्यक्ति की स्वतंत्रता का अधि ग्रहण नहीं कर सकती है। उच्चतम न्यायलय का यह निर्णय 1963 में रामनारायण बनाम दिल्ली राज्य मामले में आया था।

7. ऐसे मौलिक अधिकार जो विधायिका पर प्रतिबंध लगाते हैं–

- अनु० 15
- अनु 17
- अनु० 18
- अनु० 20 और अनु० 24

8. ऐसे मौलिक अधिकार जो राज्यों के साथ निजी व्यक्तियों के विरूद्ध भी उपलब्ध है–

- अनु० 15 (2) – सार्वजनिक समागम के स्थानों पर पहुंचने या उनके उपयोग के विषय में समानता
- अनु० 17– अस्पृश्यता की मनाही ।
- अनु० 18 (3), (4)– विदेशी उपाधियां स्वीकार करने की मनाही ।
- अनु० 23– मानव के दुर्व्यापार का प्रतिषेध।
- अनु० 24– खतरनाक उ।ोगों में बच्चों को लगाने क प्रतिषेध।

मौलिक अधिकारों की इंग्लैंड, अमेरिका और भारत के संदर्भ में तुलनात्मक अध्ययन

- इंग्लैड का अलिखित संविधान होने के कारण यहाँ मौलिक अधिकार का कोई संहिता नहीं किया गया है। जबकि अमेरिका या भारत के लिखित संविधानों में मौलिक अधिकारों का संहिताकरण किया गया है। यही कारण है कि इंग्लैंड में व्यक्तिगत अधिकारों की प्रकृति नकारात्मक है अर्थात् इंग्लैंड में व्यक्ति को अपने मन के अनुसार कोई भी कार्य (अधिकार और स्वतंत्रता) करने की आजादी है। किंतु यह स्वतंत्रता और अधिकार इंग्लैंड की सामान्य विधि के किसी नियम का उल्लंघन नहीं करने तक ही होगी। स्पष्ट है इंग्लैंड में व्यक्ति की स्वतंत्रता न्यायिक निर्णयों द्वारा सुनिश्चत की जाती है अर्थात् इंग्लैंड में भी अन्य देशों की भांति व्यक्ति के अधिकारों का संरक्षण न्यायपालिका करती है। किंतु न्यायपालिका का यह संरक्षण इंग्लैड में सिर्फ कार्यपालिका के विरूद्ध व्यक्ति को प्राप्त है अर्थात् जब विधायिका/ संसद व्यक्ति के अधिकारों का अतिक्रमण करती है तो न्यायालय प्रभावहीन हो जाता है। स्पष्ट हैं इंग्लैंड में सैद्धांतिक रूप से संसद सबसे शक्तिशाली है। इस कारण इंग्लैंड में न्यायालयों को विधायिका द्वारा पारित कानूनों के पुनरावलोकन की शक्ति प्राप्त नहीं है। ऐसे में इंग्लैंड में किसी भी विधि को

इस आधार पर असंवैधानिक घोषित नहीं किया जा सकता कि वह किसी मूल अधिकार या नैसर्गिक अधिकार का उल्लंघन करती है। वहीं दूसरी तरफ अमेरिका के अधिकार-पत्र में शामिल प्रावधान विधायिका पर उतने ही प्रभावशाली है जितने कि कार्यपालिका पर अर्थात् अमेरिका में न्यायिक सर्वोच्चता कायम है। ऐसे में न्यायालय वहां की विधायिका अर्थात् कांग्रेस के किसी अधिनियम को इस आधार पर असंवैधानिक घोषित कर सकती है कि उस अधिनियम के उपबंधों ने अधिकार पत्र में वर्णित व्यक्ति के अधिकारों का उल्लंघन किया है। इसके साथ अमेरिका में आपात स्थिति बनने पर मौलिक अधिकारों को निलंबित करने की शक्ति विधायिका को न देकर न्यायपालिका को दी गई है।

- अगर हम भारत की स्थिति को देखे तो पता चलता है कि यहाँ पर मौलिक अधिकारों से संबंधित प्रावधान कार्यपालिका और विधायिका की शक्तियों पर एक समान रूप से आरोपित मर्यादाओं और प्रतिबंधो के रूप में लागू होते हैं। हालांकि, भारतीय संविधान में मौलिक अधिकारों की संकल्पना को अमेरिका के संविधान से लिया गया है। किंतु अमेरिका से विपरीत भारत में संसदीय संप्रभुता और न्यायिक सर्वोच्चता के मध्य एक संतुलन स्थापित करने का प्रयास किया गया है। ऐसे में भारत में यदि विधायिका या कार्यपालिका संविधान द्वारा प्रदत्त मौलिक अधिकारों का अतिक्रमण किया जाता है तो वैसी स्थिति में न्यायालय विधायिका द्वारा निर्मित विधान को अंसवैधानिक घोषित कर सकता है अर्थात् भारत में विधायिका या संसद संविधान द्वारा निर्धारित मर्यादाओं और प्रतिषेधों के अधीन ही विधान या कानून बना सकती है। वास्तव में भारतीय संविधान का अनुच्छेद 13 मौलिक अधिकारों की अवहेलना से संबंधित प्रश्न के निर्धारण का अधिकार न्यायालय को सौंपता है।

  इसी संदर्भ में अनुच्छेद **13 (2)** कहता है कि राज्य ऐसी कोई विधि नहीं बनाएगा जो इस भाग द्वारा प्रदान किए गए अधिकारों को छीनती है या कम करती है। ऐसे में इस खंड के उल्लंघन में बनाई गई प्रत्येक विधि उल्लंघन की मात्रा तक शून्य घोषित होगी।

क्या मौलिक अधिकारों में संशोधन हो सकता है ?

- संसद मौलिक अधिकारों में संशोधन कर सकती है या नहीं, यह विवाद का विषय रहा है। 1952 ई. में शंकरी प्रसाद बनाम भारत संघ मामले में सर्वोच्च न्यायालय ने यह निर्णय दिया कि अनुच्छेद 368 के अधीन संसद द्वारा संविधान संशोधन की शक्ति में मूल अधिकार भी शामिल है। न्यायालय ने इस निर्णय को बाद में सज्जन सिंह बनाम राजस्थान राज्य मामले में अनुमोदित किया, किंतु न्यायालय ने यह कहा कि वास्तव में यदि संविधान निर्माता मौलिक अधिकारों को संशोधन से अलग रखना चाहते तो संविधान में ऐसा स्पष्ट प्रावधान होता। ऐसे में संविधान के किसी भी भाग को न्यायालय के अनुसार सामान्य विधान द्वारा तब तक परिवर्तित नहीं किया जा सकता जब तक कि स्वयं संविधान में इसके लिए प्रावधान न किए गए हों। यह प्रावधान संविधान के अनुच्छेद 4 में है। स्पष्ट है संविधान के सभी भाग अनुच्छेद 368 के तहत संशोधित किए जा सकते हैं किंतु संविधान के आधारभूत लक्षणों में संशोधन नहीं हो सकता।
- 1967 में 'गोलकनाथ बनाम पंजाब राज्य' मामले के निर्णय तक उच्चतम न्यायालय ने यह निर्धारित किया था कि संविधान का ऐसा कोई भाग नहीं है जिसका संशोधन नहीं किया जा सकता अर्थात् अनुच्छेद 368 की अपेक्षाओं के अनुरूप संविधान संशोधन अधिनियम पारित कर संविधान के किसी भी भाग में संशोधन हो सकता है और यह संशोधन मौलिक अधिकारों के साथ अनुच्छेद 368 में भी संभव है। यह निर्णय शंकरी प्रसाद बनाम भारत संघ मामले में आया था। इन सभी मामलों में न्यायालय मौलिक अधिकारों के संरक्षक के रूप में तभी तक काम कर सकते हैं जब तक वे भारत की संसद द्वारा अपेक्षित बहुमत से संशोधित नहीं किए जाते।

- किंतु गोलकनाथ बनाम पंजाब राज्य मामले में न्यायालय ने अनुच्छेद 368 में वर्णित संशोधन प्रक्रिया के मौलिक अधिकारों के संशोधन की प्रक्रिया पर रोक लगा दी। ऐसे में उच्चतम न्यायालय ने अपने पूर्व के दो निर्णयों को उलटते हुए यह निर्धारित किया कि भाग–3 में शामिल मौलिक अधिकारों को संविधान ने सर्वोच्च स्थिति प्रदान की है। ऐसे में संविधान के कार्य करने वाली संसद को अनुच्छेद 368 के अधीन मौलिक अधिकारों में संशोधन की शक्ति नहीं प्राप्त है।
- किंतु संसद ने 24वें संविधान संशोधन अधिनियम, 1971 द्वारा अनुच्छेद 13 और अनुच्छेद 368 का संशोधन करके यह स्पष्ट किया कि अनुच्छेद 368 में वर्णित प्रक्रिया के अनुसार मौलिक अधिकारों में भी संशोधन किया जा सकता है। स्पष्ट है उच्चतम न्यायालय के गोलकनाथ बनाम पंजाब राज्य मामले को संसद ने अध्यारोहित कर लिया।
- पुन: उच्चतम न्यायालय ने 1973 में केशवानंद भारती बनाम केरल राज्य मामले में बहुमत से संसद के इन संशोधनों को विधि के अनुसार मानते हुए अपने गोलकनाथ मामले को उलट दिया और यह निर्णय दिया कि संसद अनुच्छेद 368 के तहत मौलिक अधिकारों में संशोधन कर सकती है। साथ ही उच्चतम न्यायालय ने केशवानंद मामले मे यह निर्णय भी दिया कि संशोधन की शक्ति की संविधान में कुछ मर्यादाएं हैं जिनके अनुसार संशोधन द्वारा संविधान के आधारभूत लक्षणों में परिवर्तन नहीं किया जा सकता ।

  वर्तमान समय में न्यायालय द्वारा प्रतिपादित आधारभूत लक्षणों के इस नए सिद्धांत की बाधा को तब ही मिटाया जा सकता है जब केशवानंद मामले में 13 न्यायाधीशों की न्यायापीठ से बड़ी कोई न्यायपीठ इस मामले में दिए गए निर्णय को उलट दे।

KHAN GLOBAL STUDIES
Most Trusted Learning Platform
KHAN SIR